|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 7: ज्ञानविज्ञानयोग

2/2 (श्लोक 13-30), रविवार, 19 जनवरी 2025

विवेचक: गीता प्रवीण ज्योति जी शुक्ला

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/Lv26e2B588g

श्रीभगवान् के प्रिय भक्त

ईश्वर की सुमधुर प्रार्थना, प्रिय मधुराष्टकम्, हनुमान चालीसा पाठ एवं दीप प्रज्वलन के साथ अध्याय सात के दूसरे भाग का बालकों के लिए विशेष सत्र प्रारम्भ हुआ।

आरम्भ में प्रयाग में चल रहे महाकुम्भ पर बच्चों का प्रश्नोत्तर के रूप में ज्ञानवर्धन किया गया।

प्रश्न- प्रयाग में कुछ मुख्य आयोजन चल रहा है। इसका नाम क्या है?
उत्तर- कुम्भ।
प्रश्न- यह क्यों होता है?
उत्तर- श्रीभगवान् के दर्शन और आस्था हेतु यह आयोजन होता है।
प्रश्न- इसके आयोजन के पीछे क्या कथा है?
उत्तर- देवता और दानवों ने समुद्र मन्थन किया था जिसमें से अमृत निकला। दानवों से बचाने के लिए इस अमृत कलश को इन्द्र के पुत्र जयन्त लेकर भागे। इससे अमृत की कुछ बूँदें प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में गिर गईं। तभी से इन चार तीर्थ स्थानों पर कुम्भ मेले का आयोजन होने लगा।
प्रश्न- कुम्भ कितने प्रकार का होता है?
उत्तर-
एक कुम्भ तीन वर्ष में होता है।
एक कुम्भ छः वर्ष में होता है।
एक कुम्भ बारह वर्ष में होता है।
और एक कुम्भ एक सौ चवालीस वर्ष में होता है।
इस वर्ष प्रयाग में महाकुम्भ का मेला लगा है। यह एक सौ चवालीस वर्ष के बाद आया है। यह हमारे जीवन का पहला महाकुम्भ है। सभी को इसमें अवश्य जाना चाहिए। अब यह महाकुम्भ अगले एक सौ चवालीस वर्ष के बाद आएगा। उस समय हम नहीं होंगे।
प्रश्न- प्रयाग में कौन- कौन सी नदियों का सङ्गम है?
उत्तर- यहाँ गङ्गा, यमुना और सरस्वती तीन नदियों का सङ्गम है। इस सङ्गम स्थान को त्रिवेणी भी कहते हैं।

पिछले भाग में श्रीभगवान् ने ज्ञान और विज्ञान के विषय में बताया था। परा और अपरा प्रकृति के विषय में भी बताया। अब आगे के श्लोक में श्रीभगवान् अपने स्वरूप की बात कर रहे हैं।

7.13

त्रिभिर्गुणमयैर्भावै:(र्), एभिः(स्) सर्वमिदं(ञ्) जगत्।
मोहितं(न्) नाभिजानाति, मामेभ्यः(फ्) परमव्ययम्॥13॥

किन्तु - इन तीनों गुण रूप भावों से मोहित यह सम्पूर्ण जगत (प्राणिमात्र) इन गुणों से अतीत अविनाशी मुझे नहीं जानता।

विवेचन- सात्त्विक, राजसिक और तामसिक इन तीनों गुणों से हम स्वयं को बाँध लेते हैं। इन गुणों से मोहित होकर हम संसार में नृत्य करते रहते हैं।

इन तीनों गुणों का अर्थ क्या है?
सात्त्विक का अर्थ है- अच्छे कार्य करना।
राजसिक का अर्थ है- सांसारिक वस्तुओं से मोह और आसक्ति होना।
तामसिक का अर्थ है- बुरे विचारों का मन में आना, आलस्य करना, सोते रहना और खाते रहना।

हमें अपने अन्दर सात्त्विक गुणों का विकास करना है। यदि हम श्रीभगवान् के प्रिय बनना चाहते हैं तो हमें सात्त्विक बनना पड़ेगा।

प्रश्न- और कौन से अध्याय में सात्त्विक गुणों के बारे में बताया गया है?
उत्तर- चौदहवें और सत्रहवें अध्याय में भी सात्त्विक गुणों को विकसित करने के विषय में बताया गया है।

अगले श्लोक में बताया गया है कि जब श्रीभगवान् हमारे चारों ओर हैं, कण- कण में हैं तो हमें दिखाई क्यों नहीं देते।

7.14

दैवी ह्येषा गुणमयी, मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते, मायामेतां(न्) तरन्ति ते॥14॥

क्योंकि मेरी यह गुणमयी दैवी माया दुरत्यय है अर्थात् इससे पार पाना बड़ा कठिन है। जो केवल मेरे ही शरण होते हैं, वे इस माया को तर जाते हैं।

विवेचन- अब श्रीभगवान् यहाँ कह रहे हैं कि "**मेरी यह गुणमयी दैवी माया दुष्कर है।**"

मम्- अर्थात् मेरी।
दुरत्यया- अर्थात् दुष्कर है।

हम मोह - माया में फँस जाते हैं। मोह- माया क्या है? हमें खेलना है, फोन चलाना है, घूमना है, यह सब मोह - माया है। जब हम इस माया में फँस जाते हैं तब हमें श्रीभगवान् दिखाई नहीं देते। जैसे परीक्षा में पढ़ने के अतिरिक्त हम फोन चलाते हैं तो हम फोन के मोह में बिल्कुल भूल जाते हैं कि हमें पढ़ाई भी करनी थी। फोन चलाने या घूमने में हमें इतना आनन्द आने लगता है कि हम पढ़ाई को भूल जाते हैं। इसी प्रकार संसार के मोह में फँस कर हम श्रीभगवान् को भूल जाते हैं। हमें इस मोह - माया में अत्यधिक बँधना नहीं है। कभी- कभी माँ के बताए कामों को भी हम भूल जाते हैं और कहते हैं मैं यू ट्यूब चला रही थी अथवा फोन चला रही थी। हमें ऐसा नहीं करना है।

जो श्रीभगवान् की शरण में आ जाते हैं वो इस संसार से तर जाते हैं, अर्थात् श्रीभगवान् को प्राप्त कर लेते हैं।

7.15

न मां(न्) दुष्कृतिनो मूढाः(फ्), प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना, आसुरं(म्) भावमाश्रिताः॥15॥

परन्तु - माया के द्वारा जिनका ज्ञान हरा गया है, (वे) आसुर भाव का आश्रय लेने वाले (और) मनुष्यों में महान नीच (तथा) पाप-कर्म करने वाले मूढ़ मनुष्य मेरे शरण नहीं होते।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "माया के द्वारा जिन मनुष्यों का ज्ञान हर लिया गया है वे मनुष्य मेरी शरण को प्राप्त नहीं होते।"

जो लोग माया में पूरी तरह से संलिप्त रहते हैं वे मुझे प्रिय नहीं होते और मुझे प्राप्त भी नहीं होते हैं इसलिए हम जो भी कार्य कर रहे हैं, उसके आनन्द में हम सब कुछ न भूल जाएँ। सभी कार्य समय से पूर्ण हों, इसके लिए अपनी समय सारणी बनाकर उसका पालन करना चाहिए, परन्तु जब श्रीभगवान् की भक्ति करनी हो तो सब कुछ भूलकर ही करनी चाहिए। हमें श्रीभगवान् का प्रिय बनना है। उन्हें अपना सबसे अच्छा मित्र बनाना है। श्रीभगवान् की भक्ति के लिए कोई समय सीमा नहीं है।

सोलहवें अध्याय में बताया गया था, बुरे मनुष्यों में क्या- क्या आसुरी वृत्तियाँ होती हैं-

दम्भो दर्पाभिमानश्च, क्रोधः, पारुष्यमेव च।
अज्ञानमचाभिजातस्य, पार्थ, सम्पदम्, आसुरीम्।।

ऐसे लोग श्रीभगवान् को प्राप्त नहीं होते हैं। भगवद् प्राप्ति के लिए हमें अपने अन्दर दैवीय गुण लाने होगें।

7.16

चतुर्विधा भजन्ते मां(ञ्), जनाः(स्) सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी, ज्ञानी च भरतर्षभ॥16॥

हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन ! पवित्र कर्म करने वाले अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी अर्थात् प्रेमी - (ये) चार प्रकार के मनुष्य मेरा भजन करते हैं अर्थात् मेरे शरण होते हैं।

विवेचन- इसमें श्रीभगवान् के चार प्रकार के भक्त बताए गए हैं -

अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी।

अर्थार्थी- अर्थात् सब कुछ पाने की इच्छा से श्रीभगवान् की पूजा करने वाले भक्त। जैसे आप कहो कि भगवान् मुझे इतने नम्बर दिला दो, मैं इतने रुपए का प्रसाद चढ़ाऊँगा। इक्कीस, एक सौ एक, पाँच सौ एक रुपए का प्रसाद चढ़ाऊँगा और नम्बर नहीं आए तो प्रसाद भी नहीं चढ़ाते।

एक आरती भी है-

सुख सम्पत्ति घर आवे
कष्ट मिटे तन का।

आर्त भक्त- जब हम बहुत दुःखी होते हैं तब श्रीभगवान् को याद करते हैं। जैसे जब द्रोपदी का चीर हरण हुआ तब पहले द्रौपदी ने सभा में सबकी ओर देखा। सबने विवशता से अपने सर झुका लिए। तब द्रोपदी ने श्रीभगवान् को याद किया। श्रीभगवान् दौड़ते हुए आए और द्रोपदी की सहायता की। जब कभी अन्धेरे में हम कहीं जा रहे हों और डर के मारे हम श्रीभगवान् को याद करने लगते हैं। हम भजन करते हुए जाते हैं। यह आर्त्त भक्ति है।

जिज्ञासु भक्त- जिन्हें श्रीभगवान् को जानने की इच्छा होती है। जैसे नचिकेता, उद्धव जी थे। इन्हें श्रीभगवान् के स्वरूप को जानने की इच्छा थी।

ज्ञानी भक्त- जिन्होंने बहुत सारी साधना, पूजा कर ली। जो श्रीभगवान् को जानते हैं। हनुमान जी और शुकदेव जी ऐसे ही ज्ञानी भक्त हैं।

प्रश्न- आप किस प्रकार के भक्त हैं?
उत्तर- हम तीन प्रकार के भक्त हैं। अर्थार्थी भक्त हैं क्योंकि हम श्रीभगवान् से अपने परिवार की प्रसन्नता माँगते हैं। जिज्ञासु भक्त भी हैं क्योंकि श्रीभगवान् को जानने की इच्छा भी है और हम आर्त भक्त भी हैं क्योंकि दुःख होने पर हमें श्रीभगवान् ही याद आते हैं।

7.17

तेषां(ञ्) ज्ञानी नित्ययुक्त, एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थम्, अहं (म्) स च मम प्रियः॥17॥

उन चार भक्तों में मुझ में निरन्तर लगा हुआ, अनन्य भक्ति वाला ज्ञानी अर्थात् प्रेमी भक्त श्रेष्ठ है; क्योंकि ज्ञानी भक्त को मैं अत्यन्त प्रिय हूँ और वह भी मुझे (अत्यन्त) प्रिय है।

विवेचन- अब श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "**जो भक्त निरन्तर मेरी भक्ति करता है, मेरा चिन्तन करता है, ऐसा ज्ञानी भक्त मुझे प्रिय है।**"

श्रीभगवान् को जानने के लिए हमें बहुत सारी तपस्या और साधना करनी होगी। अभी तो हमने श्रीमद्भगवद्गीता पढ़नी आरम्भ की है। एक साथ हम बहुत कुछ नहीं कर सकते। ऐसा नहीं है कि हम हिमालय पर जाकर तपस्या करनी आरम्भ कर दें। यह आवश्यक नहीं है।

जैसे कि प्रारम्भिक शिक्षा से धीरे-धीरे हम आगे बढ़ते हैं। एक-एक सीढ़ी चढ़ते हुए स्नातक की परीक्षा भी देते हैं। इसी प्रकार श्रीभगवान् को प्राप्त करने के लिए भी हम धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं। आगे बढ़ते-बढ़ते किसी जन्म में हम ज्ञानी भक्त बन जायेंगे।

स्वामी रामसुख दास जी ने एक बार अपने प्रवचन में कहा कि एक दिन आप सब को भगवत् प्राप्ति निश्चित है। सभी आश्चर्य चकित थे कि ऐसा कैसे हो सकता है? स्वामी जी ने फिर कहा कि ऐसा होना निश्चित है किन्तु आप जैसे - जैसे अपनी तपस्या करते जाओगे, जैसे - जैसे आपके पुण्य का खाता भर जाएगा तब आपको ईश्वर की प्राप्ति होगी।

जो सारा दिन श्रीभगवान् की भक्ति में लीन हैं उन्हें तो श्रीभगवान् की प्राप्ति होनी ही है। हम कर्मयोगी हैं। सारा दिन पूजा नहीं कर सकते। परन्तु ध्यान करना, श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ना, यह सब कार्य तो कर ही सकते हैं। जब हम बूढ़े हो जाएँगे तो हमारे पास गीता पढ़ने के लिए समय ही समय होगा। जिसकी जितनी शीघ्र साधना पूरी हो जाएगी, उसे श्रीभगवान् मिल जायेंगे। कोई अधिक साधना कर रहा है तो उसे जल्दी श्रीभगवान् मिल जायेंगे। कोई धीरे पाठ कर रहा है तो उसे देर से श्रीभगवान् मिलेंगे।

7.18

उदाराः(स्) सर्व एवैते, ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।
आस्थितः(स्) स हि युक्तात्मा, मामेवानुत्तमां(ङ्) गतिम्॥18॥

पहले कहे हुए सबके सब (चारों) ही भक्त बड़े उदार (श्रेष्ठ भाव वाले) हैं। परन्तु ज्ञानी (प्रेमी) तो मेरा स्वरूप ही है - (ऐसा मेरा) मत है। कारण कि वह मुझसे अभिन्न है (और) जिससे श्रेष्ठ दूसरी कोई गति नहीं है, (ऐसे) मुझ में ही दृढ़ स्थित है।

विवेचन- ये जो ज्ञानी भक्त होते हैं, ये श्रीभगवान् के प्रेम में इतने डूबे रहते हैं कि इन्हें किसी बात का कुछ पता नहीं रहता। कभी - कभी तो ये अपना नाम तक भूल जाते हैं, अपना घर भूल जाते हैं कि मैं कहाँ रहता हूँ? ये ज्ञानी भक्त चारों प्रकार के भक्तों में श्रेष्ठ और ईश्वर का ही स्वरूप माने गए हैं।

7.19

बहूनां(ञ्) जन्मनामन्ते, ज्ञानवान्मां(म्) प्रपद्यते।
वासुदेवः(स्) सर्वमिति, स महात्मा सुदुर्लभः॥19॥

बहुत जन्मों के अन्तिम जन्म में अर्थात् मनुष्य जन्म में सब कुछ परमात्मा ही है - इस प्रकार (जो) ज्ञानवान मेरे शरण होता है, वह महात्मा अत्यन्त दुर्लभ है।

विवेचन- श्रीभगवान् कहते हैं कि "कीट, पशु, पक्षी आदि चौरासी लाख योनियों के अन्तिम जन्म में मनुष्य का जन्म होता है। इनमें जो ये बात जानते हैं कि सब कुछ परमात्मा ही हैं, ऐसे मनुष्य दुर्लभ होते हैं।"

कई लोग श्रीभगवान् के अस्तित्व पर प्रश्न उठाते हैं तो कई लोग परमात्मा की भक्ति में ही लीन रहते हैं।

7.20

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः(फ्), प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं(न्) तं(न्) नियममास्थाय, प्रकृत्या नियताः(स्) स्वया॥20॥

परन्तु - उन-उन कामनाओं से जिनका ज्ञान हरा गया है, (ऐसे मनुष्य) अपनी-अपनी प्रकृति अर्थात स्वभाव से नियन्त्रित होकर उस उस अर्थात देवताओं के उन-उन नियमों को धारण करते हुए उन-उन देवताओं के शरण हो जाते हैं।

विवेचन- हम अपनी इच्छाओं के वशीभूत होकर श्रीभगवान् को भूल जाते हैं और इच्छा पूरी करने के लिए किसी अन्य देवता की शरण में जाते हैं।

मनुष्य जीवन का उद्देश्य परमात्मा की प्राप्ति है। श्रीभगवान् की प्राप्ति का अर्थ है सब कार्य करते हुए भी श्रीभगवान् का ध्यान करते रहना। ईयर फोन लगाकर रास्ते में गाने सुनने के स्थान पर भजन सुन सकते हैं। धीरे - धीरे हम श्रीभगवान् के प्रिय बन जायेंगे। हमारी इच्छाएँ हमारा ध्यान मुख्य उद्देश्य से भटका देती हैं, इसलिए श्रीभगवान् का ध्यान करते रहना आवश्यक है।

7.21

यो यो यां(म्) यां(न्) तनुं(म्) भक्तः(श्), श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां(म्) श्रद्धां(न्), तामेव विदधाम्यहम्॥21॥

जो-जो भक्त जिस-जिस देवता का श्रद्धापूर्वक पूजन करना चाहता है, उस-उस देवता में ही मैं उसी श्रद्धा को दृढ़ कर देता हूँ।

विवेचन- श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "जो भक्त जिस देवता की पूजा करता है, उनकी वैसी श्रद्धा मैं ही दृढ़ करता हूँ।"

जैसे हमारी साढ़े साती चल रही है तो हम शनि देव की पूजा करते हैं।
यदि हमें धन की आवश्यकता है तो हम लक्ष्मी जी की पूजा करते हैं।
ऐसे ही हमें जो चाहिए हम उस देवता की पूजा करने लगते हैं। वर्षा चाहिए तो इन्द्र देव की पूजा करने लग जाते हैं। अग्नि नहीं जल रही तो अग्नि देव को याद करने लग जाते हैं।

श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "इन देवताओं की पूजा करने से जो श्रद्धा उत्पन्न होती है उसे दृढ़ करने का काम मैं ही करता हूँ।"

7.22

स तया श्रद्धया युक्तः(स्), तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः(ख्) कामान्, मयैव विहितान्हि तान्॥22॥

उस (मेरे द्वारा दृढ़ की हुई) श्रद्धा से युक्त होकर वह मनुष्य उस देवता की (सकाम भावपूर्वक) उपासना करता है और उसकी वह कामना पूरी भी होती है; परन्तु वह कामना-पूर्ति मेरे द्वारा ही विहित की हुई होती है।

विवेचन- श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "जिस भी कामना से, जिस भी देवता की पूजा की जाए, जैसे कि मुझे धन मिल जाए अथवा मेरा यह कष्ट चला जाए, ये सब कामनाएँ पूर्ण भी होती हैं, परन्तु ये सब मेरे द्वारा ही पूरी की जाती हैं।"

जैसे विद्यालय में प्रवेश विभाग, परीक्षा विभाग, अलग- अलग विभाग होते हैं, परन्तु उन्हें सब कार्य करने की मुख्य शक्ति प्रधानाध्यापक से ही मिलती है। इसी प्रकार जिस भी देवता की पूजा की जाए, उसका फल श्रीभगवान् के द्वारा ही दिया जाता है।

7.23

अन्तवत्तु फलं(न्) तेषां(न्), तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति, मद्भक्ता यान्ति मामपि॥23॥

परन्तु उन तुच्छ बुद्धि वाले मनुष्यों को उन देवताओं की आराधना का फल अन्त वाला (नाशवान्) ही मिलता है। देवताओं का पूजन करने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं (और) मेरे भक्त मेरे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन- यहाँ पर श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "जिस कामना से देवता की पूजा की जाती है, वह इच्छा तो पूर्ण होती है परन्तु मेरी प्राप्ति नहीं होती है।" जैसे विद्या पाने के लिए देवी सरस्वती की पूजा की जाए तो विद्या प्राप्ति तो होगी परन्तु ईश्वर की प्राप्ति नहीं होगी। श्रीभगवान् की प्राप्ति श्रीभगवान् का स्मरण करने से ही होगी।

श्रीभगवान् और देवता में अन्तर होता है। श्रीभगवान् का जन्म और मृत्यु नहीं होती है। श्रीभगवान् सदैव थे, हैं और रहेंगे। कुछ नहीं हैं तो भी श्रीभगवान् हैं, सब कुछ है तो भी श्रीभगवान् ही हैं। जैसे मनुष्य योनि है वैसे ही देवता योनि भी है। कोई देवता कम या अधिक शक्तिशाली होता है, यह उसके पुण्य कर्मों पर निर्भर करता है।

जैसे एक जिले में IAS अधिकारी के पास सबसे अधिक शक्तियाँ हैं। उसके नीचे वाले अधिकारियों के पास उससे कम शक्तियाँ है। जिस देवता के पास जितने अधिक पुण्य कर्म फल होते हैं, वह उतना ही शक्तिशाली हो जाता है। जिसके पास सबसे अधिक पुण्य कर्म हैं वह इन्द्र बन जाता है।

7.24

अव्यक्तं(म्) व्यक्तिमापन्नं(म्), मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं(म्) भावमजानन्तो, ममाव्ययमनुत्तमम्॥24॥

बुद्धिहीन मनुष्य मेरे परम, अविनाशी (और) सर्वश्रेष्ठ भाव को न जानते हुए अव्यक्त (मन-इन्द्रियों से पर) मुझ (सच्चिदानन्दघन परमात्मा) को मनुष्य की तरह शरीर धारण करनेवाला मानते हैं।

विवेचन- बुद्धिहीन लोग श्रीभगवान् को मनुष्य मानते हैं जिनके पास कुछ शक्तियाँ थीं, परन्तु हम लोग श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ते हैं, हम बुद्धिमान लोग हैं। हम जानते हैं कि भगवान् राम, विष्णु जी के अवतार थे। भगवान कृष्ण भी विष्णु जी के अवतार थे। श्रीभगवान् ने ही मनुष्य रूप में अवतार लिया था। उनमें वही सब दैवीय गुण थे।

7.25

नाहं(म्) प्रकाशः(स्) सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं(न्) नाभिजानाति, लोको मामजमव्ययम्॥25॥

यह जो मूढ़ मनुष्य समुदाय मुझे अज (और) अविनाशी ठीक तरह से नहीं जानता (मानता), उन सबके (सामने) योगमाया से अच्छी तरह से ढका हुआ मैं प्रकट नहीं होता।

विवेचन- श्रीभगवान् तो कण - कण में विराजमान हैं, परन्तु हम उन्हें देख नहीं पाते। हम संसार की वस्तुओं के मोह में फँसे रहते हैं। जिससे हमारे चर्म चक्षु श्रीभगवान् को देखने में असमर्थ हैं। श्रीभगवान् तो हमारे अन्दर भी हैं। उन्हें देखने के लिए हमें बहुत सारी मेहनत करनी होगी। बहुत सारी साधना और तपस्या करनी होगी।

7.26

वेदाहं(म्) समतीतानि, वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि, मां(न्) तु वेद न कश्चन॥26॥

हे अर्जुन ! जो प्राणी भूतकाल में हो चुके हैं, तथा जो वर्तमान में हैं और जो भविष्य में होंगे, (उन सब प्राणियों को) तो मैं जानता हूँ; परन्तु मुझे (भक्त के सिवाय) कोई भी नहीं जानता।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "मैं सबके भूत(past), वर्तमान(present) और भविष्य(future) को जानता हूँ।" श्रीभगवान् सबका सब कुछ जानते हैं कि किसके साथ क्या हुआ था? क्या हो रहा है? और क्या होगा? लेकिन हम सब श्रीभगवान् को नहीं जानते। यदि हम श्रीभगवान् में श्रद्धा रखते हैं, तब ही हम उन्हें जान सकते हैं।

7.27

इच्छाद्वेषसमुत्थेन, द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि सम्मोहं(म्), सर्गे यान्ति परन्तप॥27॥

कारण कि - हे भरतवंश में उत्पन्न शत्रु तापन परंतप ! इच्छा (राग) और द्वेष से उत्पन्न होने वाले द्वन्द्व-मोह से (मोहित) सम्पूर्ण प्राणी संसार में (अनादि काल से) मूढ़ता को अर्थात् जन्म-मरण को प्राप्त हो रहे हैं।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् इच्छा और द्वेष के विषय में बता रहे हैं। इच्छा हमारी कामनाओं (desires) को कहते हैं और द्वेष का अर्थ है ईर्ष्या।
श्रीभगवान् कहते हैं कि "इच्छा और द्वेष से उत्पन्न होने वाले द्वन्द्व और मोह से सभी प्राणी जन्म-मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं।" इसका अर्थ है कि हमारी इच्छाएँ तथा दूसरों से ईर्ष्या में फँस कर हम बार-बार जन्म लेते हैं, बार-बार हमारी मृत्यु होती है और यह जन्म-मरण का चक्र चलता रहता है।

पुनरपि जननम् पुनरपि मरणम् ।
पुनरपि जननी जठरे शयनम् ॥

हम अपनी इच्छाओं और आसक्ति (attachment) के कारण इस जीवन-मृत्यु के चक्र में घूमते रहते हैं। ऐसा नहीं होता कि हम मोक्ष को प्राप्त कर रहे हैं। उसके लिए हमें बहुत तपस्या करनी होती है।

7.28

येषां(न्) त्वन्तगतं(म्) पापं(ञ्), जनानां(म्) पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता, भजन्ते मां(न्) दृढव्रताः॥28॥

परन्तु जिन पुण्यकर्मा मनुष्यों के पाप नष्ट गये हैं, वे द्वन्द्व मोह से रहित हुए मनुष्य दृढ़व्रती होकर मेरा भजन करते हैं।

विवेचन- यहाँ श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "जिन पुण्यकर्मा मनुष्यों के पाप नष्ट हो गए हैं, वे द्वन्द्व - मोह से रहित मनुष्य दृढ़व्रती होकर मेरा भजन करते हैं।"

पुण्यकर्मा का अर्थ है ऐसे मनुष्य, जिन्होंने बहुत सारे पुण्य किए हों। जब हम बहुत सारे पुण्य कर्म करते हैं, श्रीभगवान् की भक्ति कर लेते हैं, पूजा-पाठ कर लेते हैं, बहुत सारा ध्यान कर लेते हैं, श्रीमद्भगवद्गीता पढ़ लेते हैं, तब हमारे पाप नष्ट होते जाते हैं। ऐसे ही जब हम महाकुम्भ में स्नान करके आएँगे, तब हमारे सारे पाप धुल जाएँगे, अर्थात् नष्ट हो जाएँगे।

श्रीभगवान् कह रहे हैं कि "ऐसे मनुष्य मेरा भजन करते हैं।"
जब हमारे पाप कम हो जाते हैं, तब हमारा मन श्रीभगवान् में लगने लगता है, इसलिए हमें अच्छे-अच्छे काम करते रहना चाहिए और अपने पुण्यों को बढ़ाते रहना चाहिए।

7.29

जरामरणमोक्षाय, मामाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः(ख्) कृत्स्नम्, अध्यात्मं(ङ्) कर्म चाखिलम्॥29॥

वृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्ति पाने के लिये जो मेरा आश्रय लेकर प्रयत्न करते हैं, वे उस ब्रह्म को, सम्पूर्ण अध्यात्म को और सम्पूर्ण कर्म को भी जान जाते हैं।

विवेचन- यहाँ बताया गया है कि वृद्धावस्था में मृत्यु से मुक्ति पाने के लिए, अर्थात् जन्म-मरण के चक्कर से बाहर आने के लिए हम ब्रह्म को, सम्पूर्ण अध्यात्म को और सम्पूर्ण कर्म को भी जान जाते हैं। इन सबसे मुक्ति पाने के लिए हम श्रीभगवान् का आश्रय ले लेते हैं। जब हम श्रीभगवान् की भक्ति करने लगते हैं, तब हम सब कुछ जान लेते हैं।
वृद्धावस्था में कुछ व्यक्ति ठीक से चल नहीं पाते हैं। यदि हम प्रतिदिन व्यायाम (exercise) करेंगे, योग करेंगे तब हम वृद्धावस्था अर्थात् बुढ़ापे में अच्छी तरह से चल सकते हैं और अच्छे से खेल-कूद भी सकते हैं। यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम अपना ध्यान कितनी अच्छी तरह रखते हैं। अगर हम अभी अपना ध्यान नहीं रखेंगे तो फिर बुढ़ापे में देखते रहेंगे कि चारों ओर क्या चल रहा है? हमारे घुटनों में दर्द भी हो जाएगा और हम अच्छी तरह से चल नहीं पाएँगे, इसलिए हमें अपने शरीर का ध्यान रखना चाहिए।

7.30

साधिभूताधिदैवं(म्) मां(म्), साधियज्ञं(ञ्) च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां(न्), ते विदुर्युक्तचेतसः॥30॥

जो मनुष्य अधिभूत तथा अधिदैव के सहित और अधियज्ञ के सहित मुझे जानते हैं, वे मुझमें लगे हुए चित्त वाले मनुष्य अन्तकाल

में भी मुझे ही जानते हैं अर्थात् प्राप्त होते हैं।

विवेचन- अधिदैव का अर्थ ब्रह्माजी होता है तथा अधिभूत का अर्थ ब्रह्माण्ड (Universe) होता है।

श्रीभगवान् कहते हैं कि "जो मनुष्य अधिदैव और अधिभूत के साथ मुझे जानते हैं, वे ब्रह्माजी को भी समझते हैं और ब्रह्माण्ड को भी समझते हैं, ऐसे मनुष्य अन्तकाल में मुझे ही प्राप्त हो जाते हैं।"

यदि हमें श्रीभगवान् को प्राप्त करना है तो हमें बहुत सारा ज्ञान बढ़ाना पड़ेगा। इसके लिए हमें श्रीमद्भगवद्गीता पढ़नी चाहिए, ध्यान करना चाहिए, श्रीभगवान् की भक्ति करनी चाहिए। जब हमारा ज्ञान बढ़ता है, तब हम श्रीभगवान् के प्रिय हो जाते हैं और मृत्यु के समय उन्हें ही प्राप्त होते हैं। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि हम श्रीभगवान् के प्रिय हो जाएँ, जीवन के हर स्तर पर, चाहे बचपन हो, युवावस्था हो या बुढ़ापा हो, हमें हमेशा श्रीभगवान् का ध्यान करना चाहिए।

इसके साथ ही हरिनाम सङ्कीर्तन करते हुये सातवें अध्याय का विवेचन पूर्ण हुआ तथा प्रश्नोत्तर सत्र आरम्भ हुआ।

प्रश्नोत्तर
प्रश्नकर्ता - सम्वित चौधरी भैया
प्रश्न - तेरहवें श्लोक का अर्थ पुनः बताएँ।
उत्तर - प्रकृति त्रिगुणात्मिका है। सत्त्व, रज और तम ये तीनों गुण श्रीभगवान् के बनाए हुए हैं जिनसे यह सम्पूर्ण विश्व बना है। जो परमात्मा के अव्यय स्वरूप को नहीं समझते वे ही इन गुणों के जाल में फँसते हैं।

प्रश्नकर्ता - सान्वी दीदी
प्रश्न - अर्थार्थी और ज्ञानी भक्त में क्या अन्तर है?
उत्तर - अर्थार्थी भक्त श्रीभगवानि से कुछ पाने की लालसा से उनकी पूजा और प्रार्थना करते हैं जबकि ज्ञानी भक्त बिना किसी आशा के भक्ति करते हैं, वे श्रीभगवान् के अव्यय स्वरूप को समझते हैं।

प्रश्नकर्ता - सान्वी दीदी
प्रश्न - देवता और श्रीभगवान् में क्या अन्तर है?
उत्तर - जैसे एक देश के मुखिया प्रधानमन्त्री होते हैं और उनका मन्त्री मण्डल होता है जो उनके अधीन काम करता है, वैसे ही देवतागण श्रीभगवान् के अधीन होकर उनके निर्देशों का पालन करते हैं। श्रीभगवान् में अनन्त शक्ति होती है जबकि देवताओं की शक्ति सीमित होती है।

प्रश्नकर्ता - नित्या जयसवाल
प्रश्न - इतने सारे भगवान हैं तो उनमें मुख्य कौन हैं?
उत्तर - जैसे एक ही व्यक्ति के अनेक नाम होते हैं, ईश्वर भी एक ही तत्त्व हैं जिन्हें विभिन्न नामों और अवतारों से जाना जाता है, इसलिए सभी मुख्य हैं। हम हृदय से जिनकी पूजा करते हैं वही हमारे लिए मुख्य हो जाते हैं।

प्रश्नकर्ता - अक्षत भैया
प्रश्न - छब्बीसवें श्लोक को फिर से समझाएँ।
उत्तर - श्रीकृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं कि वे सभी जीवों को जानते हैं और उन्हें सबका भूतकाल तथा वर्तमान काल पता है, यही नहीं वे भविष्य में जो होने वाला है उसे भी जानते हैं, परन्तु जिनको उन पर श्रद्धा और विश्वास नहीं है वे उन्हें नहीं जान सकते।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां (म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे

ज्ञानविज्ञानयोगो नाम सप्तमोऽध्यायः॥

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'ज्ञानविज्ञानयोग' नामक सातवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||